जैन साहित्य अकादमी ट्रस्ट, मुंबई

व्याख्यानमाला - २०२२/२३

जैन धर्म के वैज्ञानिक सत्य/तथ्य और व्यवहारिक जीवन में उनका अनुसरण

व्याख्यान - १८ जैन दार्शनिक चिंतन के विकासमे गणित की भूमिका

व्याख्याता - डॉ. अनुपमजी जैन

दिनांक -२१/०४/२०२३

गणित सार संग्रह में अंदर देखा तब महावीराचार्य कहते हैं कि

बहुप्रापैकि त्रैलोक्ये सचराचरे
अर्थात् और व्यर्थ के प्रलापी से लाभ है जो कुछ इन तीनों लोकों में बराबर है उनका अस्तित्व गणित से विलग अलग नहीं|
जितनी जितनी चराचर वस्तुएं जगत में है चाहे वह स्टेबल हो या मूविंग हो वह गणित के बिना अलग नहीं है| इनका अस्तित्व गणित के बिना नहीं है और अगर बारीकी से समझे तो इनको गणित के बिना जानना और समझना संभव ही नहीं है| यह बात 850 ईसवी में हो गई |

जब 18वीं शताब्दी में पंडित टोडरमल जो कि द्रवयानुयोंग के विद्वान माने जाते हैं| अध्यात्म के विद्वान माने जाते हैं वे कहते हैं 'बहुरि जे जीव संस्कृतादि ज्ञान सहित है किन्तु गणित आम्नायादिक के ज्ञान के अभाव से मूल ग्रंथ या संस्कृत टीका विषै प्रवेश करहू'। उन्होंने यह बात आचार्य नेमीचंद्र सूर्य सिद्धांत चक्रवर्ती के द्वारा लिखे गए गोमेद सवार ग्रंथ गोमट्ठा सार ग्रंथ लब्धि सार छपना सार आदि ग्रंथों की भाषा टीका लिखते हुए कहां है| उनका यह कहना जो लोग संस्कृत जानते हैं गणित के ज्ञान के अभाव से न तो मूल ग्रंथ न तो उनकी टिकाऊ को समझ पाते हैं उन लोगों की मदद के लिए इस भाषा टीका को लिखा गया है| और परोक्ष रूप से एक बात बनी और समझ में आई कि अगर संस्कृत प्राकृत आदि के मूल ग्रंथ का जितने आगम ग्रंथ है उनको समझना है तो उसके लिए गणित जरूरी है क्योंकि गणित के ज्ञान के अभाव से कुछ भी चीजें समझ नहीं पाते हैं और भाषा

टीका के साथ एक अर्थ समद्रुस्टी अधिकार उन्होंने जोड़ा और जिसमें तमाम सिंबॉल जो मॉडल क्रिप्टोग्राफी है सिंबल के रूप में संकेत के रूप में उसको सहनानी के के रूप में उसके अंदर रखी गई है तो कहने का आशय यह है कि जैन दार्शनिक चिंतन जो हमारे आगम ग्रंथों में समाहित है और उसको जानने के लिए हमको गणित का ज्ञान जरूरी है|

दिगम्बर परम्परा में आ. समन्तभद्र द्वारा रत्न्करंद श्रावकाचार में किया गया चार प्रकार के अनुयोग विभाजन निम्नवत् है-
प्रथमं करणं चरणं द्रव्यम् ।।
प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यानुयोग
आचार्य समन्तभद्रस्वामी रत्नकरंड श्रावकाचार में लिखते है-
लोकालोक विभक्ते परिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च ।
आदर्शमिव तथातिमिर वैति करणानुयोग च। 12/44

उक्त प्रकार का सम्यग्ज्ञान ही लोक अलोक के विभाग को युगों के परिवर्तन द्वारा चारों गतियों को दर्पण सदृश ऐसे करणानुयोग को जानता है। अर्थात जिसमें लोक अलोक युग परिवर्तन और चतुर्गति परिवर्तन का वर्णन है (वह करणानुयोग है) इस अनुयोग से सम्पूर्ण विश्व का स्वरूप जान लिया जाता है। आगम में को पढ़ने वाला लोग जो विज्ञान में रुचि रखता है वह अनुयोग द्वार को छोड़ भी नहीं सकता क्योंकि अनुयोग द्वार तो वैज्ञानिक संदर्भों का खजाना है और इसीलिए श्वेताम्बर परम्परा में आर्यरक्षित द्वारा किया अनुयोग विभाजन क्रम निम्नवत है।
द्रव्यानुयोग चरण-करणानुयोग गणितानुयोग धर्मकथानुयोग|

धर्मकथानू योग और प्रथमानूयोग में विषय वस्तु एक ही है लेकिन जो करणानुयोग है दिगंबर परंपरा में करणानुयोग के जो ग्रंथ है उसमें कर्म साहित्य भी आ जाता है और लोक विषयक साहित्य भी आ जाता है और श्वेतांबर परंपरा में जो स्ट्रक्चर ऑफ कॉसमॉस की बात है गणितानुयोग में आई है और चरणानुयोग में आचार और विचार आ जाते हैं| तो सारे विषय का विभाजन लगभग एक जैसा है लेकिन सुविधा की दृष्टि से यहां पर थोड़ा सा अलग अलग कर दिया है| जिसको जैसा समझ में आया| तो आप यह देखें के विषय

की दृष्टि से करणानुयोग या गणितानुयोग का जो जो सेक्शन है वह full.of mathematics है मैथमेटिक्स से भरा पड़ा है| गणितानुयोग और करणानुयोग को तो किसी भी स्थिति में बिना गणित के जाना नहीं जा सकता और अगर करणानुयोग नहीं जानेंगे तो यह आत्मा पुण्य पाप जैसे भी कर्म करने के बाद कहां जाती है ?16 स्वर्ग कहां है? सिद्धशिला कहां है? नरक कहां है? यह सब पता कैसे चलेगा ? यह सब जानने के लिए और 84 लाख योनियों की जो बात है उसे जानने और समझने के लिए यह जरूरी है कि हम करणा अनुयोग को समझें । कर्म प्रकृति को जाने बगैर समझे बिना हमारी स्थिति भी जैनेतर धर्म के लोगो जैसी हो जायेगी। 8 कर्मों की प्रकृति और उत्तर प्रकृति यह कैसे कैसे बनती है कब-कब कितने-कितने अंशो में बनती है? कैसे बंद होता है? नीरजरा कैसे होती है ? यह सारी बातें बिना गणित के नहीं समझी जा सकती और अगर हम यह मान लेते हैं और यह जानने की कोशिश करते हैं कि जंबूद्वीप कहां है? घातकी खंड कहां है? लवण समुद्र कहां है? और सिद्ध शीला कहां है? तो इसके लिए भी गणित की जरूरत पड़ेगी| इसलिए जैन दर्शन को चिंतन को ठीक से समझने के लिए गणित की बहुत बातें उसकी महत्वपूर्ण भूमिका हो जाती है| इसीलिए प्रोफेसर एल सी. जैन जिन्होंने 1958 से लेकर के 2000 तक निरंतर 42 साल खूब लेखन किया और बड़ी अमूल्य कृर्तियां दी| मुनि श्री श्री कन्हैया लाल जी ने जो गणितानुयोग लिखा है इसके अंदर गणित का कितना विस्तार से विवेचन है वह अकादमिक क्षेत्र के लोगों के लिए उपयोगी है।

जिसमे गणित की बहुलता है ऐसे मूल स्त्रोत ग्रंथ देखे तो

श्वेताम्बर परम्परा

1. सूत्रकृतांग 2. स्थानांग 3. भगवती (व्याख्या प्रज्ञप्ति) 4. जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति
5. अनुयोगद्वार 6. धवला टीका आ. वीरसेन (816 ई.) 6. उत्तराध्ययन
7. तत्वार्थाधिगगसूत्रभाष्य-आ. उमा स्वाति
8. विशेषावश्यक भाष्य-आ. जिनभद्रगणि (609 ई.)
9. लोक प्रकाश उपा. विनयविजयगणि (1604 1681ई.) आदि

दिगम्बर परम्परा

1. षट्खंडागम (आ. धरसेन आदि) (प्रथम श.ई.)
2. तिलोयपण्णत्ति आ. यतिवृषम (176 ई.)

3. लोएविभाग- आ. सर्वनन्दि (458 ई.)
4. सर्वार्थसिद्धि- आ. पूज्यपाद (5-6वीं श.ई.)
5. तत्वार्थराजवार्तिक आ. अकलंक (620 680ई.)
6. धवल टीका आ वीरसेन
7. तिलोयसार- आ. नेगिचद्र सिद्धान्तचक्रवर्ती (981ई.)
8. गोम्मटसार (जीवकाण्ड एवं कर्मकाण्ड) -आ. नेमिचन्द्र सिद्धा:
9. जम्बूदीवपण्णत्तिसंगहो आ. पद्मनन्दि (977-1043 ई.) आदि
लौकिक गणित के प्रमुख जैन ग्रंथ
1. त्रिशतिका - आचार्य श्रीधर (799 ई.)
2. गणितसार संग्रह आचार्य महावीर (850 ई.)
3. व्यवहारगणित एवं क्षेत्रगणित राजादित्य (1190 ई.)
4. गणिततिलक - सिंहतिलक सूरि (13हवीं श.ई.)
5. गणितसार कौमुदी - लक्कुरफेरू (1265-1330 ई.) आदि यह तो केवल प्रकाशित ग्रंथ हैं। की गिनती बहुत लंबी है किंतु यहां पर 9- 9 ग्रंथ ही लिए गए हैं । यह सारे ग्रंथ तो आगम ग्रंथ है| एक पक्ष कहता है 12 वा अंग नष्ट हो गया है दूसरा कहता है 11 के 11 नष्ट हो गए हैं| कोई नश्ट नहीं हुआ है जिसको जो याद रहा वह लिखा गया और सब सुरक्षित है चाहे वह 11 अंग हो वह भी आचार्यों के द्वारा लिखे गए हैं दिगंबर परंपरा के ग्रंथ भी हमारे महान पूर्व आचार्यों के द्वारा लिखे गए हैं| यह सब जैन साहित्य की निधियां है और हम अपनी निधियों को विस्मृत कर दे? कोई हीरा को कांच मान के फेंक दे तो उससे ज्यादा मूर्ख कौन है? यह तो हमारे सब जैन समाज के जैन साहित्य जगत के थाती हैं जो हमें पूर्व के आचार्यो से मिली है| इनमें जो गणित है उन्हें समझने के लिए कई बार ट्रेनिंग भी देनी पड़ती है| इसके लिए हमारे आचार्य ने कुछ स्वतंत्र ग्रंथ लिखे हैं जैसे आचार्य श्री धरने वृष टिका, आचार्य महावीर ने 850 में गणितसार संग्रह लिखा राज आदित्य ने 7 ग्रंथ लिखे। आदि बहुत ग्रन्थ मिलते है| यह छपी हुई किताबों की बात हमने की अब जो नहीं छपी हुई है उनका लिस्ट देखे तो, पचाससे ज्यादा ग्रंथो की सूचि है जो की अप्रकाशित या अनुपलब्ध है| महान जैनाचार्यों द्वारा प्रणीत अनेक ग्रंथ आज भी या तो अनुपलब्ध हैं या अप्रकाशित

है। मैं ऐसे ग्रंथ की मात्र संक्षिप्त सूची यहाँ दे रहा हूँ जिन्हें विशेष रुचि है ये मेरे अन्य आलेख / पुस्तकें देखें।

गणितानुयोग/करणानुयोग के अप्रकाशित / अनुपलब्ध ग्रंथ

1. परिकर्म सूत्र (परियम्म सुत्त) आ. कुन्दकुन्द (12सरी ई)
2. करण सूत्र यतिवृषभ (2सरी ई)
3. बीजगणित, ज्योतिर्ज्ञानविधि, पाटीगणितसार (अप्रकाशित) आदि-आ. श्रीधर (799 ई.)
4. सिद्धपद्धति एवं उसकी टीका आ. वीरसेन (816 ई.)
5. बृहदद्वारा परिकर्म आ. नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवती (981)
6. षट्त्रिंशिका / षट्त्रिंशतिका (अप्रकाशित) -आ.माधवचन्द्र विद्य (11वीं शई)
7. वित्रराहुगे, व्यवहारस्न जैनगणितसूत्रोदाहरण आदि राजादित्य (1190 ई.)
8. पाटीगणित। अनंतपाल136वी शई)
9. त्रैलोक्य दीपक (अप्रकाशित)पं. वामदेव (14वीं राई)
10. गणित संग्रह / गणितसार (कन्नड) चन्द्रम (1650 ई)
11. त्रिलोक दर्पण भाषा (अप्रकाशित)खडगसेन (1050 ई.)
12. गणित साठसी (अप्रकाशित) महिमोदय (1605 ई.)
13. गणितसार (अप्रकाशित) हेमराज गोदीका (1673)
14. गणितसार (अप्रकाशित) आनन्द मुनि (1674 ई.)
15. लीलावती कन्नड़ बालवेद्य चेलुव (1715 ई.)

आदि 50 से ज्यादा ग्रंथों की संख्या लिस्ट है। इतना इतना सब होने के बाद भी हम गणित के प्रति गफलत क्यों रहे गणित के प्रति हमारी राह रुचि क्यों जागृत नहीं हो रही है? इसका कारण है कि यह विषय कुछ ज्यादा कठिन रहता था तो स्वाध्यायी लोग इसको छोड़ कर आगे बढ़ जाते थे दूसरा एक कारण यह था यह अलग-अलग नामों से आया समयांग में गणेय शब्द आया है और स्थानानग में संख्यान आया है, नंदी सूत्र में मिथ्या सूत्र कहा गया है और अनुयोग द्वार में लौकिक आगम कहां गया है| यह सब गणित के ही नाम है इतना सूक्ष्म है इसमें स्थान में कहा गया कि गणित भी सूक्ष्म है और भंग भी सूक्ष्म है उसने भंग को इतना महत्व दिया कि गणित को एक छोटा भाई बना दिया| यह

स्थानांग के के दसवें अध्याय में आया है| इसकी सुक्षमता और व्यापकता को ध्यान में रखते हुए ही बी.एल.उपाध्याय कहते हैं कि यदि जैन लोग इस युग में 500 इसवी सन पूर्व से 500 गणित का अंधयुग माना जाता है completely wrong है|

यह कोई गलत है बिल्कुल गलत है| अरे जिस काल में हमारे सारे आगम लिखे गए जब वल्लभी वाचना हुई देवाधि गणि क्षमा श्रमण की 457 58 में उसके पहले तभी तो यह सब संपादित होकर आया तो इस पीरियड में यानी 1000 साल में भगवान महावीर के निरवाण के एक 1000 वर्ष में ही सारे आगमन की रचना हुई और इसको यह लोग अंधा युग कहते हैं क्यों जिन्होंने साहित्य पढ़ा नहीं वैदिक परंपरा का ही साहित्य पढा और कहा कि इसमें तो इसी मैं तो कोई मैथमेटिक्स है ही नहीं | लेकिन बीएल उपाध्याय ने बिल्कुल डंके की चोट पर बात कही के यदि जैन लोग अपने धार्मिक ग्रंथ संजोए न रखते तो एतत कालीन गणित इतिहास पूर्ण रूप से अंधकार विलीन हो गया होता था| स्थानाग सूत्र भगवती सूत्र और अनुयोग द्वार सूत्र इस युग के प्रमुख ग्रंथ है, जो गणित के संदर्भों से ओतप्रोत है। अनुयोगद्वार एक ऐसी कुंजी है जिसमें मैथमेटिक्स भरा पड़ा है| संखयान के प्रकारों की सबसे पहली बात भारत में हुई तो स्थानांग सूत्र में हुई है | भगवती सूत्र तो बिल्कुल भंडार है मैथमेटिक्स का | भंग का सूत्र तो भगवती सूत्र से ज्यादा कहीं विस्तृत में नहीं है इन तीनों ग्रंथों की बात बी एल उपाध्याय ने के कही है नहीं बल्कि इंडियन किंतु फॉरेन के लोग भी इसे अप्रिशिएट करते हैं |जॉर्ज जी जोसेफ

George G. Joseph [Author of Crest of Peacock]ने कहा है कि

What is being suggested here is that further work on this aspect (ie. theory of transfinite numbers) of Jaina Mathematics may prove fruitful in future research on the foundation of Mathematics that Jain Literature from 1500-2000 year may hold valuable clues to the very nature of mathematics is an exciting thought.Ganita Bharati. 16(3-4), 1994, P-15

जब अनकाउंटेबल नंबर की बात आती है तो दूसरे लोगों के पास उनका कंसेप्ट ही नहीं है| वहां काउंटेबल नंबर है या तो इंफोनिक नंबर है। हमारे आचार्यों ने भगवती सूत्र में धवला हो तिलोई प्रति हो गौमठ सार हो बड़ी इन्फेंट इसी को क्रिएट किया है| मैथमेटिकल सीक्वेंसेस केवल त्रिलोक सार में मिलते हैं सिरिस का मामला भी मिलता है| इनफिनिटी

का कंस्ट्रक्शन किया जाता है, यह कला का केवल जैनियों को आती है| जिस मैं यह ग्रंथ कंपोज किए गए हैं उससे 300 साल पहले 300 साल पुराने हैं और लोग कंफ्यूज भी हुए बी वी दत्त ने लिखा है हमारे अपने हमारे धर्म गुरु के बारे में कहते हैं कि इनको मैथमेटिक्स पढ़ना क्यों जरूरी है? दीक्षा और प्रतिष्ठा के लिए शुभ लगन और मुहूर्त पता करने के लिए क्योंकि उनको पूरी बात मालूम नही थी वे दीक्षा के मुहूर्त में फस के रह गए| उनको मालूम ही नहीं पड़ा कॉस्मोलॉजी के लिए भी चाहिए, लॉजिक के लिए भी चाहिए कर्मा थिअरी के लिए भी चाहिए इन सब के लिए मैथमेटिक्स जरूरी है| इस मैथमेटिक्स बहुत ही महत्वपूर्ण भाग है जैन शास्त्र का जैन लिटरेचर का एक अविभाज्य अंग है बिना उसके शास्त्र की कल्पना नहीं की जा सकती|

जैन आगमों में गणितीय अध्ययन के विषय विस्तार से की विस्तार से चर्चा की गई है
जैन आगमों में गणित से सम्बद्ध विषयवस्तु के बारे में महत्वपूर्ण प्रकाश डालने वाली एक गाथा हमें अंग साहित्य के अन्तर्गत उसके तृतीय अंग स्थानांगसूत्र (ठाण) के 10वें अध्याय में प्राप्त होती है। गाथा निम्न प्रकार है:-
दस विधे संखाणे पण्णत्ते तं जहा!
परिकम्मं ववहारो रज्जु रासी कलासवन्ने (कलासवण्णे) य।
जावंतावति वग्गो धनो ततह वग्ग वग्गो वि कप्पो त ।।10/100||

इस गाथा में संख्यान (गणित) के 10 प्रकारों की चर्चा है। स्थानांगसूत्र के व्याख्याकार अभयदेवसूरि ने सर्वप्रथम इसकी व्याख्या प्रस्तुत की थी। तदुपरांत बी.बी. दत्त, एच.आर. कापडिया, बिहारीलाल अग्रवाल, बी.एल. उपाध्याय, एल. सी. जैन आदि विद्वानों ने अपनी अपनी दृष्टियों से इनकी व्याख्यायें प्रस्तुत की जिनका विस्तृत विवेचन मैंने अपने आलेख 'जैन आगमों में निहित गणितीय अध्ययन के विषय में किया है। हम यहाँ अभयदेवसूरि, बी.बी. दत्त एवं आधुनिक मत को सारणीबद्ध कर रहे हैं। छोटी सी बात कैसा अनर्थ कर देती है हमें यहां पर पता चलता है।

जैन आचार्य थोड़ी सीबी उलझन महसूस करते हैं वे तत्काल विकल्प का सहारा ले लेते हैं भंग का सहारा ले लेते हैं चाहे अनु पूर्वी की बात हो या और कोई विषय हो बहुत जटिल

विषयों को समझाने के लिए यह कंबीनेशन का इस्तेमाल किया जाता है| तो हमारे यहां भंग और विकल्प का एक अलग ही स्थान है|

आगमों में विषय से सम्बद्ध कतिपय अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्यों का उल्लेख भी आवश्यक है। आगम ग्रंथों में चर्चित गणितीय विषयों की जानकारी देने वाली एक अन्य गाथा शीलांक (9वी राई)सूत्रकृताय की टीका में पोंडरीक शब्द के निक्षेप के अवसर पर उदधृत की है। गाथा निम्नवत है-

परिकम्मं रज्जु रासी ववहारो तह कलासवण्णे (सवन्ने) य ।
पुग्गल जावं तावं घणे य घण वग्ग वगवग्गे य
टीका के संपादक महोदय ने उपर्युक्त गाथा की संस्कृत छाया निम्न प्रकार की है।

परिकम्मं रज्जु राशि व्यवहारस्तया कलासवर्णश्च ।
पुद्गलाः यावत्तावत् भवन्ति घनं घनमूलं वर्गः वर्गमूलं ।।

गाथा में भी विषयों की संख्या 10 ही है किन्तु उसमें स्थानांग में आई गाथा के विकप्पोत के स्थान पर पुग्गल शब्द आया है अर्थात् यहाँ पुद्गल को गणित अध्ययन का विषय माना गया है। विकल्प को नहीं। शेष नौ प्रकार स्थानांग के समान ही हैं। संस्कृत छाया को देखने से लगता है कि गणित अध्ययन के विषय 11 है। अर्थात् परिकर्म, व्यवहार, रज्जु, राशि, कलासवर्ण, पुदगल यावत् तावत, घन, घनमूल वर्ग एवं वर्गमूल सेन ने अपनी पुस्तक में संस्कृत छाया को उद्धृत किया है किन्तु उसके आधार पर नीचे जो विषयों की सूची बनायी गयी हैं, उसमें पुद्गल को हटाकर विकल्प गणित को सम्मिलित कर दिया है। अथवा यह कहा जाये कि स्थानाग की गाथा के विषयों को दे दिया है। इसका क्या कारण है? संभवतः उदधृत करने में त्रुटि हो गई है।
पुनः दृष्टया है कि मूल गाथा में कही कुछ ऐसा नहीं है, जो मूल शब्द को ध्वनित करता हो।यानी पुद्गल भी एक विषय बना दिया। और विकल्प को हटा दिया और जो धिक्कार है जिनको जैन दर्शन मालूम नहीं है उन्होंने इसमें वर्गमूल आ गया वर्गमूल आ गया अभी दिया और इसके बाद यह 11 हो गए यहां पर पुद्गल शब्द आ गया पुद्गल को ऐसे छोड़ा नहीं जाता यह बहुत इंपॉर्टेंट शब्द है। दत्त महोदय ने तो स्पष्ट लिखा है कि

Pudgals as a topic for discussion in Mathematics in meaningless

(विचारणीय यह है कि यह निष्कर्ष आपके द्वारा तब दिया गया था, जब कर्म सिद्धान्त का गणित प्रकाश में नहीं आया था। उस समय तक सापेक्षता के सिद्धान्त (Theory of Relativity) के संदर्भ में जनाचार्यों के प्रयास भी प्रकाशित नही हुए थे। आज परिवर्तित स्थिति यह निष्कर्ष इतना सुगमता से गले नहीं उतरता। क्योकि असंख्यात विषयक गणित, राशि सिद्धांत (Set thoery) एवं कर्म सिद्धान्त के परिष्कृत गणित का मूल तो पुद्गल ही है मापन की पद्धतिया तो यहीं से प्रारंभ होती है। एक तथ्य यह भी है कि शीलाक ने भी तो इसे किसी प्राचीन ग्रंथ से ही उदधृत किया होगा। लेकिन समस्या यह है कि पुद्गल को गणित का विषय स्वीकार करने पर विकल्प छूट जाता है। जबकि विकल्प तो अत्यधिक एवं निर्विकल्प रूप से जैन ग्रंथों में आता है| भगवती सूत्र में तो विकल्प गणित अत्यंत विस्तार से आया है। स्थानाग सूत्र (ठाण) में भी गणित एवं भंग की अलग-अलग माना गया है। यहाँ हमें बृहत्कल्प भाष्य की एक पंक्ति कुछ मदद करती है।)अर्थात पुदगल को गणित अध्ययन का विषय स्वीकार करना निरर्थक है। किन्तु भगवती सूत्र में तो पुद्गल की विशेष महत्त्व के साथ विवेचित किया गया है। यह विषय जितना भौतिकी का है उतना ही प्रयुक्त गणित (Applied Mathematics) का । एक परमाणु को एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश पर जाने के लिए जाने के लिए जो न्यूनतम समय लगता है वह एक समय है अधिकतम तो 14 राज भी जा सकता है तो समय और प्रदेश कैसे प्राप्त आए होंगे? पुद्गल के बिना यह आती है कि पुद्गल को जोड़ लोगे तो भंग कहां आएगा? स्थानांग सूत्र की एक और विशेषता है कि उसमें हर एक चैप्टर में दसवीं चैप्टर में सब चीज दसवीं 10 है, नॉर्वे में सब नव है आठवें में आठ है जो 10 वीं अध्याय की सभी का दसवी है| ऐसी स्थिति में एक और मजेदार चीज हमको मिली और हां जब हम इसने गए चौथे अध्याय में भी मिला।

"भंग गणियाइ गमिकं* (बृहत्कल्प भाष्य 143)
मयलगिरि ने इसकी व्याख्या करते हुए लिखा है कि भंग एवं गणित अलग-अलग हैं। स्थानांगसूत्र में भी दस सूक्ष्मों की चर्चा में गणित एवं भंग को अलग-अलग माना गया है। संक्षेप में यह विषय विचारणीय है एवं अभी यह निर्णय करना उपयुक्त नहीं है कि पुद्गल को गणितीय अध्ययन का विषय स्वीकार किया जाये अथवा नहीं। आजकल एस्ट्रोनोमी को

गणित से अलग कर दिया, अंक शास्त्र को गणित से अलग कर दिया | पहले इसके अंतर्गत ही था इसका ही एक भाग था शुरू शुरू में तो गणित एस्ट्रोनॉमी के अंतर्गत ही आता था| अब दोनों को अलग कर दिया तो भंग की महत्ता और उसकी व्यापकता को ध्यान में रखते हुए आचार्य ने दोनों को अलग अलग कर दिया| तो अब 10 को पूरा करने के लिए पुद्गल को भी समाहित किया जाता है |पुद्गल को ले ले और भंग को अलग विषय की मान्यता दे दे तो स्थानांग सूत्र के अध्याय की भी पुष्टि हो जाती है।
(स्थानांग सूत्र के ही चतुर्थ अध्याय में एतद्विषयक एक अन्य गाथा प्राप्त होती है।
गाथा निम्नवत् है:-

चउव्विहे संखाणे पण्णत्ते तं जहा।
परिकम्मं ववहारे रज्जू रासी।।4/505 ।।

इस गाथा पर अद्यावधि किसी ने ध्यान नहीं दिया है। एक ही ग्रन्थ में 2 प्रकार के उल्लेख क्यों हैं? कापड़िया ने लिखा है कि एक चूर्णि में संख्यान के 16 प्रकार बताये हैं । मेरे विचार से जैसे जैसे विषय की सूक्ष्मता में जाते है प्रकारों की संख्या 4 से 10, 11 एवं 16 होती जाती है।)
लेकिन कपाड़िया ने अपने इंट्रोडक्शन में लिखा है एक जगह संख्यां की 16 प्रकार दिया है तो मेरा अपना मत है सेवा छठी क्लास से पड़ा है ,रहस्यवाद छठी क्लास से पढ़ाया जाता है कबीर का रहस्यवाद सभी वर्गों में पढ़ाया जाता है, बीएएमएस जैसे-जैसे क्लास बड़ी होती है उसका एक्सप्लेनेशन बढ़ाता जाता है | अनेकांतवाद पहले दूसरे बच्चे को बता दो तो उसको यह समझ में आता है तुम किसी के भाई हो, उसके पिता के बारे में बता दो तो यह पिता भी है अब तुम्हारे और तुम्हारे दादा जी के पुत्र भी है तो इस अपेक्षा से अनेकांतवाद उसको समझ में आता है| एक व्यक्ति ने उसके जो पापा है भाई भी है पति भी है पिता भी है और पुत्र भी है| लेकिन अनेकांतवाद केवल इतना नहीं है,वह बहुत विशाल है और वर्तमान मैं तमाम समस्याओं का समाधान देने में सक्षम है| आगे पढ़ाते हैं पीएचडी तक दशीयों का सैकड़ों पीएचडी हो गया| इसी तरह संख्यां की बात है जो बहुत छोटे लेवल पर है| उसके चार प्रकार है कर्म व्यवहार रोज और राशि आगे डिटेल में पढ़ते हैं तो उसके 10 प्रकार हैं आगे 16 प्रकार है इस प्रकार से विषय की संतुष्टि होती जाती है और पुरवापर

विरोध भी नहीं होता है| हमारे आगम में जो भी बातें कही गई है वह पुरवापर विरोध रहित है| कहीं किसी की त्रुटि से बात हो गई हो तो वह बात अलग है लेकिन उसके लिए हमारे भगवान की वाणी या हमारे आचार्य जिम्मेदार नहीं हैं लोग अपनी व्याख्या करने में गलती कर सकते हैं लेकिन जैन दर्शन जैन सिद्धांत आगम पुरवापर विरोध नहीं कर सकते| यह चिंतन में कोई पुरवा पर विरोध नहीं है और इसीलिए गणित का सहारा लिया गया है एक साधन है आचार्यों के लिए, साध्य कभी भी नही रहा।

अनुयोगद्वार सूत्र का एक प्रकरण

मणुस्सा मते केवइया ओरा लियसरीरा पण्णत्ता? गोयमा दुविहा पण्णत्ता तं जहा बदल्लया य मुक्केल्लया प तत्थ ण जेते बल्लया ते मा सिय सोज्जा सिय असंखेज्जा जहणपर संज् कीढीओ एगुणतीस ठाणाई तिजमलपयस्स उवरि जमलपयस्स हेठ्ठा, अहव णं छतो दो पंचमदग्गपप्पणी अडवणं छष्णउयण गदाविरासी (अनुयोगद्वार लाडनूं संस्करण, 1000, प्रकरण-10 सूत्र-490)

अर्थात भन्ते मनुष्यों के औदारिक शरीर कितने प्रज्ञप्त है? गौतम औदारिक शरीर के दो प्रकार प्राप्त है जैसे बंद और मुक्त उनमें जो बद्ध है वो कभी संख्येय होते हैं और कभी असख्य होते हैं।

जघन्य पद में मनुष्यों के बद्ध औचारिक शरीर संख्येय होते हैं | बात दर्शन की हो रही है गणित का सहारा लिया जा रहा है क्योंकि गणित जाने बगैर यह कैसे पता चलेगा संख्या क्या है अनंत क्या है? अगर यह कह देते कभी थोड़े होते हैं कभी ज्यादा होते हैं तो बात मजेदार ही नहीं होती तो पूर्व आचार्यों ने कहां। (संख्येय का प्रमाण इस प्रकार है) नाख्यय करोड़ उनतीस अंक जितनी (आगमिक संज्ञा के अनुसार) त्रियमल पद से अधिक चतुर्थमल पद से कम होते हैं। अथवा 2 के पाँचवे वर्ग से गुणित छठे वर्ग अथवा जो राशि आधे-आधे रूप में करने पर 96 बार छिन्न हो सके उतने होते हैं। 24 पदों से ज्यादा 32 पदों से कम काउन्टेबल और २९ अंक प्रमाण कितना व्याख्या करे? कितना बताना चाहे? कितने मनुष्य है? यह बताना चाहते हैं यह बताना चाहते हैं तो यह खुलासा उन्होंने गणित का इतना उपयोग किया है कैलकुलेशन अभय देव सूरी जी ने किया है| यह कैलकुलेशन कैलकुलेटर में करेंगे तो फेल हो जाएगा।

हां यह बात कोई शास्त्र नहीं बताएगा शिवाय मैथमेटिक्स के आर्य रक्षित सूरी और अभय देव सूरी ने मनुष्य की संख्या बताने के लिए यह सहारे के रुपमे इस्तमाल करना पड़ा| यह जैन गणित के दर्शन की भूमिका है| आचार्य चाणक्य कहते हैं कि विद्या के बिना जीवन सुन्य है। ऐसे हमें सैकड़ों उदाहरण मिलेंगे

लोए विभाग (लोक विभाग) में शून्य

आचार्य सर्वनन्दिने ४५८ में लोक विभाग ग्रन्थ लिखा था और इसमें जो अस्त्रोनोमिकल सिचुएशन इसकी प्रशस्ति में भी है सूर्य इस पोजीशन में था,बुध इस पोजीशन में था तो वो जो स्थिति नासा के सोफ्टवेर में डाली गई तो तारीख आई 25 अगस्त ४५८ और वहा पर व्यास बताया गया|

पंचभ्यः खलु शून्येभ्यः परं द्वे सप्त चाम्बरम् ।
एक त्रीणि च रूपं च चक्रवालस्य पार्थवम् ।।4 / 56

अर्थात् पाँच बार शून्य दो, सात, शून्य, एक, तीन, एक पृथ्वी का व्यास प्राप्त होता है। अंकानाम् वामतो गतिः के अनुसार संख्या 13107200000 । यहाँ यह अरुणवरद्वीप के व्यास को बताने हेतु आया है।

मुझे लगता है कि करणानुयोग का अध्ययन जैन विद्वानों की अपेक्षा विदेशी विद्वान ज्यादा कर रहे हैं। George Ifrah अपनी बहुश्रुत कृति Universal Theory of Numbers में लिखते हैं कि लोए विभाग की रचना आ सर्वनन्दि ने मूलतः प्राकृत भाषा में की थी। यह मूल ग्रंथ वर्तमान में उपलब्ध नहीं है। वर्तमान में उपलब्ध आ. सिंहसूरि का संस्कृत भाषा का लोक विभाग प्राकृत भाषा में रचित मूल ग्रंथ का भाषा रूपान्तरण है। संभव है कि अनुवाद की प्रक्रिया में लेखक ने कुछ गाथाएँ जोड़ दी हो, किन्तु इससे मूल विषय पर असर नहीं पड़ता । \ इससे स्पष्ट है कि लोक विभाग के रचनाकार को शून्य के प्रयोग एवं उसके लिखने की शैली अर्थात् '0' के रूप में लिखने का ज्ञान था। लोक विभाग की प्रशस्ति में दी गई खगोलीय स्थिति के अनुसार ग्रंथ की रचना आ सर्वनन्दि द्वारा 25.08.458 ई. को की गई थी।

हमारे जैन परंपरा में सभी आचार्यों को यह ज्ञान प्राप्त था और उसी से यह आया है जहां पर जरूरत थी वहां पर यह उनका प्रयोग करते थे| भगवान महावीर की परंपरा का यह

ज्ञान है, इसलिए इसका क्रेडिट महावीर की परंपरा को ही मिलना चाहिए| अगर कोई यह कहता है कि शून्य का आविष्कार आर्यभट्ट ने किया है तो यह पूर्णता गलत है| उसके पहले तो अनुयोग द्वार है उसके पहले तिलोई पन्न्ती है उसके पहले लोग विभाग है उसके पहले शतखंडागम है| सारे ग्रंथों में यह विषय आया है और स्थानांग सूत्र में क्या नहीं है? है तभी तो शीर्ष प्रहालिका का मान निकलता है। भिन्न परंपरा के इस योगदान को हमें पूरे महत्व के साथ लेना चाहिए।

षट्खंडागम और उसकी धवला टीका में गणित

षट्खंडागम मूल (पुस्तक- 3) में लिखा है कि

ओघेण मिच्छाइट्ठी दव्व पमाणेण केवडिया, अनंता ।

अर्थात् ओध से मिथ्यादृष्टि जीव द्रव्य प्रमाण की अपेक्षा कितने हैं। जवाब अनन्त हैं। ऐसी अनेक गाथायें षट्खंडागम में आई हैं। इस विषय का विस्तार से विवेचन धवला टीका में मिलता है। धवला में राशि पुञ्ज सम्पात आदि शब्द समुच्चय के समानार्थक हैं। न केवल शब्द अपितु समुच्चयों के विविध प्रकार, उन पर संक्रियायें, प्रतिचित्रण आदि भी प्राप्त होते हैं।

* धवला टीका पुस्तक-4 में कंड़कों की चर्चा में हमें द्विपद प्रमेय का विस्तार प्राप्त होता है। इसी प्रकार 4 एवं 5 इकाई राशि के पश्चात (1+K) एवं (1+K) प्राप्त होती है जो क्रमशः द्विपद प्रमेय (Binomial Theorem) के विस्तार देती हैं। * दितत भिन्नों (Continued Fractions) का कुशलता से प्रयोग घवला पुस्तक 3 में मिलता है जो अद्वितीय है।

जैन परम्परा में अर्द्धच्छेद का प्रयोग तो तिलोयपण्णत्ती एवं अन्य ग्रंथों में भी मिलता है किन्तु धवला में अर्द्धच्छेद (log.). त्रिकछेद (log). चतुर्थच्छेद (log.). पंचच्छेद (logs), वर्गशलाका log log, का व्यवस्थित प्रयोग एवं उससे सम्बन्धित सूत्र एवं उदाहरण प्राप्त होते हैं।

आदि दीर्घ संख्याओं को व्यक्त करने हेतु जैनाचार्यों ने अनेक रीतियों का प्रयोग किया है उनमें से एक है वर्गित संवर्गितया (Self Powerial System) की रीति । आईये, जरा देखें कि 2 जैसी छोटी राशि भी इस रीति से कितनी बड़ी बन जाती है।

पंचास्तिकाय में निहित गणित

सिय अत्थि णात्थि उहयं अव्वत्तव्वं पुणो य तत्तिदयं ।

दव्वं खु सत्तभंग आदेसवसेण संभवादि ।। 14

अर्थात् वस्तु प्रयोजनों / प्रश्न-उत्तर के कारण / अधीन सात वाक्यों में ही प्रकट होती है। किसी प्रकार से अस्ति नास्ति, दोनों, अवक्तव्य और इसके अनन्तर वह तीन का समूह (अस्ति अवक्तव्य, नास्ति अवक्तव्य, अस्तिनास्ति अवक्तव्य) होती है। अस्ति नास्ति एवं अवक्तव्य अलग-अलग फिर दो-दो एवं फिर तीनों इस प्रकार कुल 7 भंग बनते हैं। इसे ही सप्त मंगी कहते हैं।[C] + C + C = 3+3+1= 7

इसी अवक्तव्यता का संख्यात्मक रूप प्रायिकता है। इस संदर्भ में P.C. Mahalnabis (1956) एवं IB.S. Haldane (1956)के आलेख पठनीय है। आ. समन्तभद्र को आप्त मीमांसा में इसका विस्तृत विवेचन है। प्रायिकता के सन्दर्भ में गैलीलियो, फर्मेट एवं पास्कल से पहले आ, कुन्दकुन्द का नाम लिया जाना चाहिए। परिकर्म शीर्षक कुन्दकुन्द के स्वतंत्र ग्रंथ या टीका (अनुपलब्ध) में शून्य के गणितीय अर्थों में प्रयोग की पूर्ण संभावनाप्रो. एल. सी. जैन ने अपने आलेख में की।

पुनःसमओ णिमिसो कट्ठा कला य णाली तदो दिवारती ।
मासोदुअयणसंवच्छरो त्ति कालो परायन्तो ।।

अर्थात समय, निमिष, काष्ठा, कला और नाली उससे दिन-रात्रि मास ऋतु अयन वर्ष होते हैं। इस प्रकार पराधीन काल वर्णित है। समय एवं प्रदेश को सम्यक रूप से परिभाषित करने का कारण काल एवं क्षेत्रमान की सूचियाँ बनाना संभव हुआ। द्रव्य की अविनाशिता एवं उर्जा के रूपान्तरण का विवेचन भी पंचास्तिकाय में उपलब्ध है। संख्यात, असंख्यात एवं अनन्त तथा उसके भेद प्रभेदों का भी आचार्य कुन्दकुन्द को ज्ञान था। दीर्घ संख्यायें तिलोयपण्णत्ती के अनुसार मिलती है|

अभयदेवसूरि (11हवीं श.ई.) ने ही इसका मान अनुयोगद्वार की टीका में दिया है-

1 शीर्ष प्रहेलिका (84)28 X 10140

758, 263, 253, 073, 010, 241, 157, 973, 569, 975, 696, 406, 218, 966, 848, 080, 183, 296 X 10140 7.582633 X 10193

जरा विचार करें क्या शून्य का गणितीय न ज्ञान होने पर भी शीर्ष प्रहेलिका के मान की गणना शक्य है? यह शीर्षप्रहेलिका भी उत्कृष्ट संख्यात से छोटी है। इससे बड़ी उत्कृष्ट संख्यात < जघन्य असंख्यात < जघन्य अनन्त < मध्यम अनन्त < उत्कृष्ट अनन्त।

वाक्षाली हस्तलिपि वर्तमान पाकिस्तान के पेशावर जिले के वक्षाली ग्राम से खेत की जुताई करते समय 1881 में एक पुलिंदा मिला गणितीय पाण्डुलिपि का । भोज पत्र पर लिखी इस पाण्डुलिपि में प्राचीन भारत के गणितीय ज्ञान की झलक मिलती है। वर्तमान में यह Oxford Univ. की Bodclian Library में सुरक्षित है। विगत दिनों में वक्षाली हस्तलिपि का काल भी 224-383 ई. के मध्य कार्बन डेटिंग से तय हो गया है। इसमें शून्य का स्पष्ट प्रयोग है। क्या इसका जैन परम्परा से कोई सम्बन्ध है? इसमें बहुत सारे शब्द जैन परंपरा के हैं। जरा विचारे?यह भी विचारों कि प्राकृत (शौरसेनी) एवं प्राकृत (अर्द्धमागधी) में लिखित गणितीय ग्रंथ आज अनुपलब्ध हैं? मात्र इनके उद्धरण मिलते हैं? क्या हम इन्हें खोजेंगे? भाषा शास्त्र की दृष्टि से अगर यह अध्ययन किया जाए तो मैथमेटिकल जो स्क्रिप्ट हमारी गायब है उसको हम समझ सकेंगे|

जिनसेन कृत लोकानुयोग (783 श.ई.)

पाण्डुलिपि का विवरण	कृति का नाम
	लोकानुयोग
व्याख्या	हरिवंशपुराण का 4था, 5वा, 6ठा अध्याय 3
लेखक का नाम	जिनसेन-1
पाण्डुलिपि का काल	783 श. ई
प्रतिलिपि काल	
प्राप्ति स्त्रोत	ऐलक पन्नालाल दिगम्बर जैन सरस्वती भंडार, उज्जैन (म.प्र.)
पाण्डुलिपि क.	543
पत्र संख्य	73
विषय	लोक रचना
भाषा	संस्कृत
लिपि	देवनागरी
पूर्ण अपूर्ण	पूर्ण

इतनी चर्चा विचारणा के बाद अब प्रश्न यह है कि

1. क्या समाज ने गणितज्ञों के साथ बैठकर आगम ग्रंथों की याचना की कोई व्यवस्था की है?

2. क्या वर्तमान में उपलब्ध लगभग 50 अप्रकाशित गणितीय पाण्डुलिपियों के संखाण लिप्यांतरण, अनुवाद,आलोचनात्मक अध्ययन की कोई योजना है?

3. सामान्यतः गणितज्ञ प्राकृत / संस्कृत की पाण्डुलिपियों के अनुवाद में सक्षम नहीं होते। अपवादों की बात अलग है।

4. गणितीय पाण्डुलिपियों के अनुवाद करने में सक्षम भाषाविदों को उसकी शब्दावली या अन्तनिर्हित भावों को समझने में दिक्कत होती है। यदि अनुवाद कर भी दे तो उसमें निहित सूत्र या भाव के ऐतिहासिक मूल्य को नहीं समझ पाते।

इस और ध्यान देने की जरूरत है तभी जैन दार्शनिक चिन्तन के विकास में गणित की भूमिका सही रूप में सामने आ सकेगी।

****

JAIN SAHITYA ACADEMY TRUST

JAIN SAHITYA ACADEMY TRUST

JAIN SAHITYA ACADEMY TRUST

JAIN SAHITYA ACADEMY TRUST